भारतीय मुद्रास्फीति की पहेली*

दीपक मोहंती

मंच पर उपस्थित सम्माननीय उच्च पदाधिकारीगणः अधिवक्ता वी. आर. पारनेरकर, अधिवक्ता लक्ष्मीकांत पारनेरकर, श्री प्रदीप पलनीतकर, श्री मोहन टांकसाले, न्यायमूर्ति म्हसे, डॉ. एस.एन. पठान और आशुतोष रारावीकर; देवियो और सज्जनो।

यह मेरे लिए बहुत ही गौरव की बात है कि मुझे स्वर्गीय डॉ रामचन्द्र पारनेरकर आउटस्टैंडिंग अर्थशास्त्री पुरस्कार 2013 से सम्मानित किया गया है। मैं इस सम्मान के लिए पूर्णवाद चैरिटेबल ट्रस्ट और इसके लाइफ मैनेजमेंट इन्स्टीट्यूट को धन्यवाद देता हूँ। यह बहुत खुशी की बात है कि पिछले अनेक वर्षों से ट्रस्ट ने मानव कल्याण का बीड़ा उठाया हुआ है और ट्रस्ट डॉ. पारनेरकर के जीवन और प्रेरणा से प्रेरित होकर सामाजिक सेवा की अनेक गतिविधियों के जरिए हमारे जीवन को श्रेष्ठ बनाने की दिशा में कार्य कर रहा है।

विद्वत रत्न डॉ. आर.पी. पारनेरकर (1916-1980) एक महान दार्शनिक और विचारक थे। उनका मानना था कि मानव जाति को कार्य करने के लिए प्रोत्साहन देना जरूरी होता है। इसके साथ-साथ, उन्हें प्रतिकूलताओं का सामना करने के लिए भावनात्मक सहयोग की जरुरत है ताकि वे अपने प्रयास जारी रख सकें। वे एक कर्मयोगी थे। वे अक्सर कहा करते थे कि ''प्रयास किए बिना भगवान की आराधना करने मात्र से कुछ नहीं होगा। गुरू विद्युत की तरह होते हैं और शिष्य एक बल्ब की तरह होता है। टूटे हुए फिलामेंट वाला कोई भी बल्ब विद्युत से प्रकाश ग्रहण नहीं करता।''

डॉ. पारनेरकर के आर्थिक और दार्शनिक विचार को पूर्णवाद कहा गया, जिसका अभिप्राय है कि वस्तु और मस्तिष्क मात्र एक वस्तु और समान वास्तविकता है जिसे उन्होंने पूर्ण कहा है। आर्थिक सिद्धांत मौलिक मानव अधिकार के रूप में भोजन के केन्द्रीय विचार के आप-पास घूमता है। इनका विश्वास था कि जब तक कोई व्यक्ति किसी दूसरे की इच्छा पर अपना भोजन कमाता रहेगा तब तक मानवता की स्थिति हमेशा खराब बनी रहेगी। इनका विश्वास था कि मुक्त भोजन लोगों को आलसी नहीं बनाएगा क्योंकि अन्य विविध आवश्यकताएं उसे परिश्रमी बना देंगी।

खाद्य सुरक्षा, गरीबी और बेरोजगारी, जिनके प्रति वे काफी गंभीर थे, आज भी ज्वलंत समस्याएं बनी हुई हैं। जब सरकार द्वारा संसद में खाद्य सुरक्षा विधेयक पेश किया गया तो डॉ. पारनेरकर का सपना पूरा होता नज़र आ रहा है। मानवता से ओतप्रोत उनकी आर्थिक दृष्टि हमेशा पीढ़ियों के लिए आदर्श बनी रहेगी। मैंने इस बात पर बहुत अधिक विचार किया कि मैं डॉ. पारनेरकर के योगदान का सम्मान कैसे करूं? सामाजिक कल्याण के लिए उनकी गहन प्रतिबद्धता को देखते हुए मैंने सोचा कि जिस तरह हम रिज़र्व बैंक में मुद्रास्फीति की वर्तमान स्थिति, विशेष रूप से खाद्य मुद्रास्फीति के बारे में चिंतित रहते हैं, वैसे ही वे भी चिंतित रहे होंगे। हम काफी समय से खाद्य मुद्रास्फीति की समस्या से जूझ रहे हैं।

मैं इस अवसर पर मुद्रास्फीति पर अपने विचार व्यक्त करना चाहता हूँ जिसका प्रभाव हम सभी पर पड़ता है। गिरती आर्थिक संवृद्धि के माहौल में पिछले तीन वर्षों से लगातार मुद्रास्फीति एक 'पहेली' बनी हुई है। मैं अपनी प्रस्तुति में निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देना चाहता हूं 'पहेली' से मेरा अभिप्राय क्या है? हमें मुद्रास्फीति से चिंतित होने की आवश्यकता क्यों है? वर्तमान मुद्रास्फीति प्रक्रिया का स्वरूप कैसा है? मौद्रिक नीति ने हाल की मुद्रास्फीति की स्थिति के बारे में कैसी प्रतिक्रिया दी है? मैं आगे मूल्य स्थिरता प्राप्त करने के लिए कुछ जरूरी उपायों के बारे में भी विचार व्यक्त करूंगा।

वर्तमान मुद्रास्फीति की पहेली?

सबसे पहले मैं संदर्भ देकर अपनी बात शुरू करना चाहता हूँ। भारत एक नियंत्रित मुद्रास्फीति वाला देश है। उदाहरण के लिए 1950-51 से 62 वर्षों के दौरान थोक मूल्य सूचकांक में हुए परिवर्तन के जरिए मापी गई औसत वार्षिक मुद्रास्फीति दर प्रति वर्ष 6.7 प्रतिशत की दर से बढ़ी है। अनेक विकसित और विकासशील देशों के आधुनिक विकास इतिहास में मौजूद बहुत अधिक उच्च मुद्रास्फीति को देखते हुए यह कोई बहुत अधिक उच्च दर नहीं है। वस्तुतः 1980 के दशक और 1990 के दशक में विश्व मुद्रास्फीति औसतन लगभग 17 प्रतिशत

* 31 जनवरी 2013 को मुंबई में स्वर्गीय डॉ. रामचन्द्र पारनेरकर आउटस्टैंडिंग अर्थशास्त्री पुरस्कार 2013 के कार्यक्रम में भारतीय रिज़र्व बैंक के उप गवर्नर श्री दीपक मोहंती द्वारा स्वीकार भाषण। इस भाषण को तैयार करने में डॉ. प्रज्ञा दास और डॉ. अभिमान दास से प्राप्त सहयोग के लिए उनके प्रति आभार व्यक्त किया गया।

वार्षिक थी। 2000 के दशक में विश्व मुद्रास्फीति में सभी स्तरों पर तीव्र गिरावट आई।

वर्ष 2000 से 2007 तक आठ वर्ष की अवधि के दौरान विश्व मुद्रास्फीति औसतन 3.9 प्रतिशत वार्षिक रही। उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में, जहां पारंपरिक रूप से उच्च मुद्रास्फीति रहती थी, वहां भी वार्षिक औसत मुद्रास्फीति 6.7 प्रतिशत देखी गई। भारत का मुद्रास्फीति निष्पादन भी डब्ल्यूपीआई की माप के अनुसार 5.2 प्रतिशत के साथ और उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (सीपीआई-आईडब्ल्यू) के अनुसार 4.6 प्रतिशत के साथ बेहतर स्थिति में रहा। 2008 में वैश्विक वित्तीय संकट के बाद उन्नत देशों तथा उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं-दोनों की मुद्रास्फीति में तेजी से वृद्धि हुई क्योंकि वस्तुओं और तेल की कीमतों में 'V' आकार के सुधार से पहले तेज वृद्धि हुई। इसके बाद, उन्नत देशों तथा उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं दोनों की मुद्रास्फीति में मामूली कमी आई। भारत में भी मुद्रास्फीति की दर 2007-08 के 4.7 प्रतिशत से बढ़कर 2008-09 में 8.1 प्रतिशत हो गई और फिर 2009-10 में कम होकर 3.8 प्रतिशत रह गई (सारणी1)। तथापि, फिर मुद्रास्फीति में बढ़ोतरी हुई और 2010-11 और 2011-12 के दौरान यह दोहरे अंक के आस-पास रही और 2012-13 में फिर कुछ कम हो गई। मुद्रास्फीति प्रबंधन के संबंध में भारत के अच्छे रिकार्ड को देखते हुए दो वर्षों से लगातार बढ़ी हुई मुद्रस्फीति की स्थिति एक पहली जैसी ही है।

सारणी 1 : हाल के वर्षों में भारत की मुद्रास्फीति दर विश्व की औसत मुद्रास्फीति की तुलना में अधिक रही है

(वर्ष-दर-वर्ष प्रतिशत में)

	2000-07 के दौरान औसत	2008	2009	2010	2011	2012	2008-12 के दौरान औसत
		वार्षिक					
वैश्विक मुद्रास्फीति							
विश्व	3.9	6.0	2.4	3.7	4.9	4.0	4.2
ईडीई	6.7	9.3	5.1	6.1	7.2	6.1	6.8
भारत में मुद्रास्फीति							
डब्ल्यूपीआई	5.2	8.1	3.8	9.6	8.9	7.6	7.6
डब्ल्यूपीआई-खाद्य	3.8	8.9	14.6	11.1	7.2	9.1	10.2
डब्ल्यूपीआई-एनएफएमपी	4.3	5.7	0.2	6.1	7.3	5.2	4.9
सीपीआई-आईडब्ल्यू	4.6	9.1	12.2	10.5	8.4	9.9	10.0

भारतीय मुद्रास्फीति के आंकड़े वित्तीय वर्ष से संबंधित हैं। ईडीईः उभरती और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं, डब्ल्यूपीआईः थोक मूल्य सूचकांक, एनएफएमपीः खाद्येतर विनिर्मित उत्पाद, सीपीआई-आईडब्ल्यू : औद्योगिक कामगारों संबंधी उपभोक्ता मूल्य सूचकांक

दूसरा, संवृद्धि में गिरावट और उत्पादन में अधिक ऋणात्मक उत्पादन अंतराल मुद्रास्फीति को कम करने में असफल साबित हुआ। यह समझने योग्य बात है कि बढ़ती आर्थिक संवृद्धि के माहौल में मुद्रास्फीति बढ़ती है। ऐसी स्थिति भी संभव है जब वास्तविक अर्थव्यवस्था अपनी संभाव्य संवृद्धि से अधिक बढ़ती है जिसके चलते मुद्रास्फीति बढ़ सकती है जिसे अर्थशास्त्री ओवरहीटिंग स्थिति कहते हैं। यह बिजली के उस केबल के समान है जिसकी क्षमता से अधिक लोड डालने पर यह खराब हो जाती है। किन्तु मामला यह नहीं है। रिज़र्व बैंक के अनुमान के अनुसार भारतीय अर्थव्यवस्था की संभाव्य उत्पादन संवृद्धि संकट के पूर्व समय के 8.5 प्रतिशत से घटकर संकट के बाद 8.0 प्रतिशत रह गई और हो सकता है कि हाल की अवधि के दौरान यह और घटकर लगभग 7.0 प्रतिशत रह गई हो। संभाव्य संवृद्धि के इस घटे अनुमान की तुलना में भी वास्तविक वर्ष-दर-वर्ष जीडीपी संवृद्धि 2010-11 की चौथी तिमाही के 9.2 प्रतिशत से काफी कम होकर 2012-13 की दूसरी तिमाही में 5.3 प्रतिशत रह गई। 2011-12 में शुरू हुई संवृद्धि में गिरावट की गति 2012-13 में भी जारी रही।

बेहतर स्थिति के दौरान आर्थिक गतिविधियां कुछ समय के लिए इस संभाव्य स्तर से अधिक हो सकती हैं और उत्पादन अंतराल अनुकूल रह सकता है। आर्थिक गिरावट के दौरान अर्थव्यवस्था अपने संभाव्य स्तर से नीचे चली जाती है और उत्पादन अंतराल नकारात्मक हो जाता है। आर्थिक सिद्धांत उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति के बीच संबंध को समझने के लिए बहुत अधिक जोर देता है। नकारात्मक उत्पादन अंतराल अर्थव्यवस्था में मंदी लाता है और इसलिए यह मुद्रास्फीति पर अधोमुखी दबाव डालता है। इसलिए, भारत की वर्तमान कम संवृद्धि-उच्च मुद्रास्फीति की स्थिति इस पारंपरिक आर्थिक सिद्धांत के विपरीत है। वास्तविक जीडीपी संवृद्धि अपने संभाव्य स्तर से काफी कम हो गई है, फिर भी मुद्रास्फीति कम नहीं हुई।

तीसरा, रिज़र्व बैंक ने मार्च 2010 और अक्तूबर 2011 के बीच 13 बार अपनी नीतिगत रिपो दर में कुल 375 आधार अंक बढ़ोतरी की। नीतिगत रिपो दर 4.75 प्रतिशत के निम्न स्तर से बढ़ाकर 8.5 प्रतिशत कर दी गई, फिर भी यह मुद्रास्फीति को रोकने में असफल रही। रिज़र्व बैंक की आलोचना करने वाले लोगों का तर्क है कि मौद्रिक नियंत्रण बढ़ाने से मुद्रास्फीति कम होने के बजाय संवृद्धि की गति धीमी हो गई। ब्याज दर प्रभावी साधन नहीं है। यह पहले संवृद्धि को

कम करता है और फिर मुद्रास्फीति को कम करता है। किन्तु संवृद्धि में गिरावट मुद्रास्फीति नियंत्रण के अनुरूप नहीं रही है।

उपर्युक्त तीन मुद्दे दर्शाते हैं कि लगातार विद्यमान रही हाल की मुद्रास्फीति एक पहेली बनी हुई है। अब मैं मुद्रास्फीति के हाल के कारणों की चर्चा करना चाहूंगा; किन्तु इसके पहले मैं इस प्रश्न के संदर्भ में चर्चा करना चाहूंगा कि उच्च मुद्रास्फीति के बारे में चिंता करने की जरूरत क्यों है?

मुद्रास्फीति का प्रभाव

यद्यपि मुद्रास्फीति एक सांकेतिक चर है फिर भी अर्थव्यवस्था पर इसका वास्तविक दुष्प्रभाव पड़ता है। मैं इस पर विस्तार से चर्चा करना चाहता हूँ।

पहला, मुद्रास्फीति मुद्रा के मूल्य को कम करती है। जैसा कि मैंने पहले उल्लेख किया है, भारत एक कम मुद्रास्फीति वाला देश है जहां मुद्रास्फीति में कभी-कभार बढ़ोतरी के बावजूद 62 वर्ष की लंबी अवधि के दौरान औसतन मुद्रास्फीति 6.7 प्रतिशत रही है। फिर भी इस अवधि के दौरान समग्र मूल्य स्तर 45 गुना बढ़ा है। इसका अभिप्राय यह है कि आज के 100 रुपये की कीमत 1950-51 के 2.2 रुपये के बराबर है। मूल्य स्थिरता मौद्रिक नीति का प्रमुख उद्देश्य होने के कारण साफ तौर पर केन्द्रीय बैंक का संबंध मुद्रास्फीति से होता है।

दूसरा, उच्च और लगातार मुद्रास्फीति सामाजिक-आर्थिक स्थिति को प्रभावित करती है। इसे देखते हुए कि मुद्रास्फीति का बोझ गरीब लोगों पर अनुपातहीन रूप से अधिक पड़ता है और इसे मानते हुए कि भारत में अनौपचारिक क्षेत्र बहुत व्यापक है, स्वयं उच्च मुद्रास्फीति वितरण में असमानता बढ़ा सकती है। इसलिए, कल्याणकारी लोक नीति के लिए कम मुद्रास्फीति संतुलित उन्नति सुनिश्चित करने हेतु एक महत्त्वपूर्ण घटक बन जाती है।

तीसरा, उच्च मुद्रास्फीति स्रोतों को उत्पादक निवेश से हटाकर सट्टेबाजी की गतिविधियों में लगाकर आर्थिक प्रोत्साहन को हतोत्साहित करती है। नियत-आय वाले व्यक्तियों और पेंशन पाने वाले व्यक्तियों की व्यय योग्य आय और उनके जीवन स्तर में गिरावट देखी गई है। मुद्रास्फीति पारिवारिक बचतों को कम करती है क्योंकि वे अपनी खपत के वास्तविक मूल्य को बनाये रखने का प्रयास करते हैं। अर्थव्यवस्था के समग्र निवेश में परिणामी गिरावट होने से संभाव्य संवृद्धि में गिरावट आती है। पिछले दो वर्षों से बनी रही उच्च मुद्रास्फीति के चलते हम पहले ही वित्तीय आस्तियों और विशेष रूप से बैंक की जमाराशियों में पारिवारिक बचतों की कमी देख रहे हैं। इसी समय सोने में लोगों की रुचि बढ़ गई है जिसके चलते हमारे भुगतान संतुलन पर अतिरिक्त दबाव पड़ रहा है।

चौथा, आर्थिक एजेन्ट अपनी वर्तमान और प्रत्याशित भावी आय के साथ-साथ भावी मुद्रास्फीति दर से संबंधित अपनी प्रत्याशाओं के आधार पर अपनी खपत और निवेश का निर्णय करते हैं। लगातार उच्च मुद्रास्फीति मूल्य अनिश्चिता के कारण पैदा होने वाली स्फीतिकारी प्रत्याशाओं और आशंकाओं को बदल देती है जिसके चलते व्यक्ति अपने खर्च में कमी करते हैं और कार्पोरेट निवेश में कमी करते हैं जिससे दीर्घावधि में आर्थिक संवृद्धि प्रभावित होती है।

पांचवां, जैसे ही मुद्रास्फीति बढ़ती है और अस्थिर हो जाती है, तो यह वित्तीय लेनदेन में मुद्रास्फीति जोखिम को बढ़ा देती है। इसलिए, सांकेतिक ब्याज दरें कम और स्थिर मुद्रास्फीति की स्थिति की तुलना में अधिक हो जाती हैं।

छठा, यदि ट्रेडिंग पार्टनर की मुद्रास्फीति की तुलना में देशी मुद्रास्फीति लगातार अधिक बनी रहती है तो यह वास्तविक विनिमय दर में वृद्धि के जरिए बाह्य प्रतिस्पर्धात्मकता को प्रभावित करती है।

अंत में, जैसे ही मुद्रास्फीति एक सीमा से अधिक हो जाती है, यह समग्र संवृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। रिज़र्व बैंक के तकनीकी मूल्यांकन के अनुसार भारत के लिए मुद्रास्फीति के स्तर की उचित सीमा 4 से 6 प्रतिशत के बीच है। यदि मुद्रास्फीति इस स्तर को पार कर जाती है तो यह मध्यावधि में आर्थिक संवृद्धि को कम कर सकती है।

वर्तमान मुद्रास्फीति बढ़ने का कारण

मैं सबसे पहले उच्च मुद्रास्फीति अवधि की पहचान करना चाहता हूँ। डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति दर दिसंबर 2009 के 7.1 प्रतिशत से बढ़कर अप्रैल 2010 में अपने उच्चतम स्तर 10.9 प्रतिशत हो गई, उसके पश्चात नवबंर 2011 तक लगभग यह दोहरे अंक में ही बनी रही। इस प्रकार, हमने जनवरी 2010 से दिसंबर 2011 के बीच दो वर्षों तक उच्च मुद्रास्फीति का अनुभव किया। दो वर्ष की इस अवधि के दौरान डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति औसतन 9.5 प्रतिशत वार्षिक रही। इस बढ़ोतरी के लिए मुद्रास्फीति के सभी प्रमुख घटक जिम्मेदार थे। मुद्रास्फीति पहली बार 2009 के दक्षिणी-पश्चिमी मानसून की असफलता

चार्ट 1 : थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति में दिसंबर 2011 से कमी आई

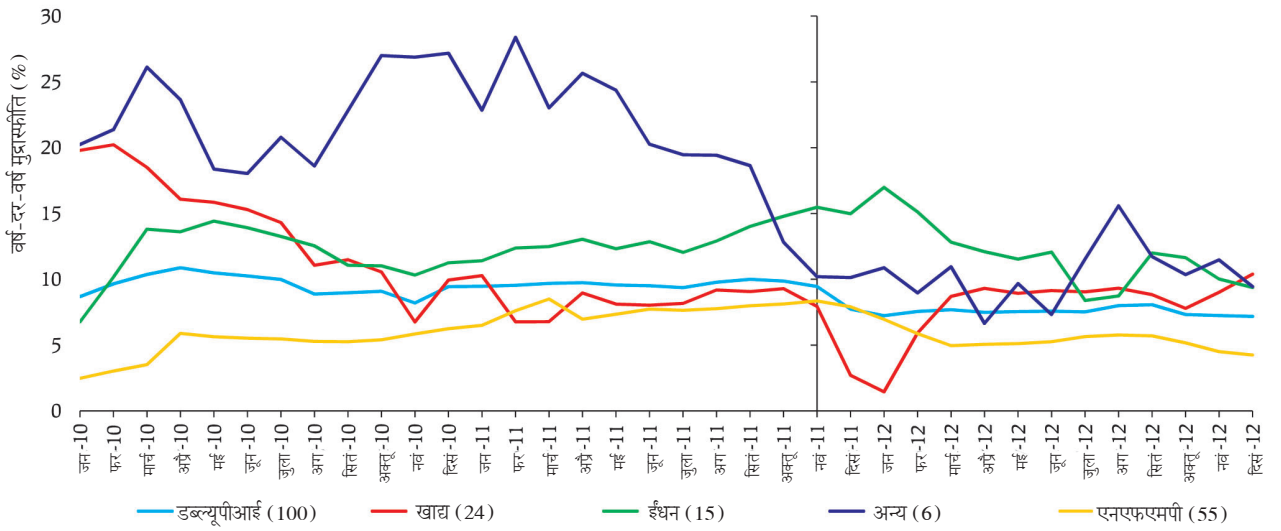

कोष्ठक में दिए गए आंकड़े भारांक है

के कारण बढ़ी, बाद में खाद्य कीमतों में तेजी से वृद्धि हुई। इसके साथ-साथ वैश्विक अर्थव्यवस्था में 2009 की मंदी में तेजी से सुधार हुआ। जिसका परिणाम यह हुआ कि तेल सहित वैश्विक वस्तुओं की कीमतों में काफी बढ़ोतरी हुई। भारत द्वारा निर्यात की तुलना में आयात, विशेष रूप से तेल का आयात अधिक होने के चलते मध्यवर्ती कीमतों में बढ़ोतरी हुई। इसका प्रभाव खाद्येतर निर्मित उत्पाद मुद्रास्फीति पर पड़ा जिसके चलते मुद्रास्फीति प्रक्रिया और भी व्यापक हो गई। ईंधन तथा विद्युत को छोड़कर इसके अन्य प्रमुख घटकों के चलते जनवरी 2012 से दिसंबर 2012 के बीच एक वर्ष बाद औसत डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति कम होकर 7.5 रह गई (चार्ट 1)।

2010 और 2011 के दौरान की उच्च मुद्रास्फीति आपूर्ति व मांग कारकों के साथ-साथ प्रतिकूल वैश्विक तथा देशी कारकों का संयुक्त रूप थी।

पहला, देशी कीमतों को परिभाषित करने में विनिमय दर उतार-चढ़ाव के साथ-साथ कच्चे तेल और अन्य वैश्विक वस्तुओं की मूल्य प्रवृत्ति की भूमिका बढ़ती जा रही है। क्रमिक बाह्य उदारीकरण के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था पहले की तुलना में अधिक मुक्त और पहले की तुलना में अधिक वैश्वीकृत हो गई है। वर्तमान समय में, भारत में कच्चे तेल की मांग का 85 प्रतिशत से अधिक हिस्सा आयात से पूरा किया जाता है। आयातित भारतीय बास्केट के कच्चे तेल की कीमतें अप्रैल 2009 के प्रति बैरल 49 अमरीकी डॉलर से बढ़कर 2010 में प्रति बैरल औसतन 79 अमरीकी डॉलर हो गई और आगे 2011 में ये कीमतें और अधिक बढ़कर प्रति बैरल 108 अमरीकी डॉलर हो गईं और 2012 में अपने उच्च स्तर अर्थात प्रति बैरल 110 अमरीकी डॉलर पर बनी रहीं। 2010 में आईएमएफ सूचकांक में दर्शायी गई वैश्विक धातुओं की कीमतों में 48 प्रतिशत की वृद्धि हुई और 2011 में पुनः 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई किन्तु 2012 में इनमें 17 प्रतिशत की गिरावट आई।

इसके अतिरिक्त, रुपये का मूल्य 2011 में गिरकर प्रति अमरीकी डॉलर की तुलना में औसतन 46.7 रुपये रहा जबकि 2010 में औसतन 45.7 रुपये रहा था। विशेष रूप से 2012 में रुपये में तेजी से गिरावट आई और यह प्रति अमरीकी डॉलर की तुलना में औसतन 53.4 रुपया हो गया। अनुभवजन्य घटनाओं से पता चलता है कि यदि रुपया-डॉलर विनिमय दर में एक प्रतिशत अंक का परिवर्तन होता है तो मुद्रास्फीति पर 10 आधार अंक का प्रभाव पड़ता है। जबकि 2010 और 2011 के दौरान वैश्विक वस्तुओं की कीमतों ने देशी मुद्रास्फीति पर प्रतिकूल प्रभाव डाला था, 2012 में रुपये में आयी गिरावट ने देशी मुद्रास्फीति के संबंध वैश्विक वस्तुओं की कीमतों को कम करने से होने वाले लाभ को संतुलित कर दिया था।

भारत के बाह्य क्षेत्र संबंध का एक अन्य महत्त्वपूर्ण पक्ष खाद्येतर विनिर्मित उत्पाद की उच्च मुद्रास्फीति की व्याख्या करना है। विश्लेषण से पता चलता है कि हाल के वर्षों में अंतरराष्ट्रीय खाद्येतर वस्तुओं की कीमतों से देशी कच्चे माल की कीमतों में पास-थ्रू बढ़ा है जो देशी और वैश्विक वस्तु

बाजार की बढ़ती परस्पर-संबद्धता को दर्शाता है। यह प्रवृत्ति कार्पोरेट वित्त आंकड़ों के जरिए भी स्पष्ट होती है जिससे पता चलता है कि व्यय और बिक्री दोनों के प्रतिशत के रूप में कच्चे माल की लागत का हिस्सा बढ़ रहा है। इसलिए, जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था अधिक एकीकृत हो रही है, वैसे-वैसे बाह्य क्षेत्र की गतिविधियां देशी मूल्य-व्यवहार के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण बनती जा रही हैं।

दूसरा, जहां देशी कृषि उत्पादन में वृद्धि लगभग 3 प्रतिशत वार्षिक पर स्थिर बनी हुई है, वहीं खाद्य की मांग बढ़ी है। यद्यपि, वर्तमान समय में देश में पर्याप्त खाद्यान्न भंडार है, फिर भी, दाल और तिलहनों के संबंध में अब भी आत्म-निर्भर नहीं है। इसके अतिरिक्त, प्रति व्यक्ति आय बढ़ने के कारण फलों और सब्जियों के साथ-साथ मांस, अण्डा, दूध और मछली जैसे प्रोटीन आधारित उत्पादों की मांग काफी बढ़ गई है। प्रोटीन मुद्रास्फीति ने संरचनात्मक स्वरूप ले लिया है। इसके चलते डब्ल्यूपीआई और सीपीआई के बीच काफी अंतर आ गया है क्योंकि उपभोक्ता मूल्य सूचकांक बास्केट में खाद्यान्न का हिस्सा काफी अधिक होता है।

इसके अतिरिक्त, आय बढ़ने के कारण वास्तविक उपभोग व्यय में काफी वृद्धि हुई है। हाल ही में, घरेलू उपभोग व्यय के संबंध में एनएसएसओ के 68वें दौर के सर्वेक्षण के प्रमुख परिणामों से पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में वास्तविक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय बढ़कर 2009-12 के औसतन 8.7 प्रतिशत हो गया जबकि 2004-09 के दौरान यह 1.4 प्रतिशत था। उसी प्रकार, शहरी क्षेत्रों में वास्तविक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय तदनुरुपी अवधि के 2.4 प्रतिशत की तुलना में बढ़कर 6.7 प्रतिशत हो गया। तथ्य यह है कि उच्च खाद्य मुद्रास्फीति की अवधि के दौरान बढ़ी वास्तविक उपभोग व्यय से पता चलता है कि मांग बहुत अधिक बनी रही, जिसके चलते उच्चतर मूल्य स्तर बना रहा क्योंकि आपूर्ति लोच कम रही थी।

वेतन में वृद्धि होने से खाद्य वस्तुओं की कीमते बढ़ जाती है। 2008-09 से 2012-13 के दौरान अब तक औसत सांकेतिक ग्रामीण पारिश्रमिक में 17 प्रतिशत की वृद्धि हुई। उच्च ग्रामीण मुद्रास्फीति को समायोजित करने बाद भी वास्तविक पारिश्रमिक में प्रतिवर्ष 6 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई जो कि काफी थी (सारणी 2)। औपचारिक क्षेत्र में कंपनी वित्त आंकड़ों से पता चलता है कि 2009-10 के मध्य से वेतन बिल में बहुत तेजी से बढ़ोतरी हुई। जैसे-जैसे वेतन बढ़ा है, वैसे-वैसे पात्रता बढ़ी है और परिणामस्वरूप आवश्यक वस्तुओं की मांग और प्राथमिकता बढ़ी है।

तीसरा, 2010 और 2011 में मुद्रास्फीति लगातार लगभग दोहरे अंक पर बनी रहने के कारण अर्थव्यवस्था में मध्यावधि और दीर्घावधि मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं बढ़ी हैं जो प्रत्याशा निर्माण में उच्च खाद्य कीमतों की भूमिका को रेखांकित करती हैं। यदि मुद्रास्फीति लगातार अधिक बनी रहने की संभावना दिखती है तो कार्मचारी अपनी वास्तविक आय को बचाने के लिए अधिक सांकेतिक मजदूरी की मांग करते हैं। इससे फर्मों की लागत पर दबाव पड़ता है और बदले में फर्मों को अपने

सारणी 2 : हाल के वर्षों में राजकोषीय घाटा और चालू खाता घाटा बढ़ा है; जहां कृषि संवृद्धि अवरुद्ध रही है, वहीं वास्तविक ग्रामीण मजदूरी में तेजी से वृद्धि हुई

(प्रतिशत में)

	2000-08 के दौरान औसत	08-09	09-10	10-11	11-12	12-13	2008-13 के दौरान औसत
		वार्षिक					
राजकोषीय/बाह्य							
जीएफडी/जीडीपी	4.4	6.0	6.5	4.8	5.7	5.1	5.6
सीएडी/जीडीपी	-0.04	-2.3	-2.8	-2.8	-4.2	-4.6	-3.3
संवृद्धि							
जीडीपी	7.2	6.7	8.6	9.3	6.2	-	7.7
कृषि जीडीपी	3.0	0.1	0.8	7.9	3.6	-	3.1
ग्रामीण मजदूरी							
सांकेतिक	3.3	10.7	15.8	18.3	19.8	18.4	16.6
वास्तविक @	-0.4	0.6	2.1	8.3	11.5	9.2	6.3

- उपलब्ध नहीं, @ कृषि श्रमिकों संबंधी उपभोक्ता मूल्य सूचकांक के लिए सांकेतिक मूजदूरी का समायोजन किया गया है।
जीएफडी : केन्द्र का सकल राजकोषीय घाटा, जीडीपीः सकल घरेलू उत्पाद, सीएडीः चालू खाता घाटा

लाभ को बचाने के लिए कीमतें बढ़ानी पड़ती हैं। स्वतंत्र रूप से, उत्पादकों की स्वयं की मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं भी प्रत्यक्ष रूप से अपने मूल्य-व्यवहार को प्रभावित करते हुए प्रभावित करती हैं। यदि कंपनियों को उम्मीद हो कि भविष्य में सामान्य मुद्रास्फीति अधिक होगी, तो वे विश्वास कर सकते हैं कि वे अपने उत्पाद की मांग में कमी की हानि के बिना अपनी कीमतों में बढ़ोतरी कर सकते हैं।

चौथा, संकट प्रेरित राजकोषीय और मौद्रिक नीति से काफी प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण प्रक्रिया को 2008-09 में उलट दिया गया जिसका प्रभाव समष्टि-आर्थिक स्थिति पर पड़ा (चार्ट 2)। उच्च राजकोषीय विस्तार भी मौद्रिक नीति संचरण की कुशलता को बाधित करता है। मुद्रास्फीति-निवारक मौद्रिक नीति रुझान के कारण निजी मांग में कमी को आंशिक रूप से राजकोषीय विस्तार से पूरा किया गया है। अब मैं मौद्रिक नीति की भूमिका के बारे में थोड़ा अधिक विस्तार से चर्चा करना चाहता हूँ।

मौद्रिक नीति की भूमिका

वैश्विक वित्तीय संकट के बाद उच्च मुद्रास्फीति का वर्तमान दौर आया जिसका प्रभाव भारत की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा, यद्यपि यह प्रभाव उन्नत देशों की तुलना में कम था। यद्यपि शुरुआती दौर में वैश्विक गतिविधियों पर प्रभाव पड़ा, फिर अंततः भारत सभी माध्यमों - व्यापार, वित्त और प्रत्याशा मध्यामों के जरिए वैश्विक आघातों से काफी प्रभावित हुआ। अधिकांश केन्द्रीय बैंकों की तरह रिज़र्व बैंक ने भी देशी और विदेशी मुद्रा चलनिधि को बढ़ाने के लिए अनेक परपंरागत और अपरंपरागत उपाय किए और नीतिगत दरों में तेजी से कटौती की। अक्तूबर 2008 से अप्रैल 2009 के बीच सात महीनों की अवधि के दौरान नीतिगत सक्रियता अभूतपूर्व रही। उदाहरण के लिए : (i) रिपो दर में 425 आधार अंक की कटौती करके यह 4.75 प्रतिशत कर दी गई, (ii) रिवर्स रिपो दर में 275 आधार अंकों की कटौती करके यह 3.25 प्रतिशत कर दी गई (iii) बैंकों का आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सीआरआर) उनकी निवल मांग और मीयादी देयता के संचयी 400 आधार अंक कम करके 5.0 प्रतिशत कर दिया गया और (iv) संभवतः वित्तीय प्रणाली में प्राथमिक चलनिधि की कुल रकम 5.6 ट्रिलियन रुपये से अधिक या जीडीपी के 10 प्रतिशत से अधिक की राशि उपलब्ध कराई गई। सरकार ने भी अनेक राजकोषीय प्रोत्साहन उपाय किए।

रिज़र्व बैंक ने अक्तूबर 2009 में संकट-कालीन मौद्रिक नीति प्रोत्साहन उपायों को समाप्त करने की आवश्यकता पर जोर दिया। किन्तु दो प्रमुख कारणों से उदार मौद्रिक नीति प्रवृत्ति से बाहर निकलना आसान नहीं था। पहला, वर्ष-दर-वर्ष हेडलाइन डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति नाममात्र अनुकूल हुई थी और पूरी तरह से खाद्य मुद्रास्फीति द्वारा प्रेरित थी (चार्ट 3)। औद्योगिक उत्पाद बढ़ने लगा था किन्तु निर्यात अभी भी घट रहा था। इसलिए, सुधार होना सुनिश्चित नहीं था। दूसरा, वैश्विक स्तर पर अधिकांश केन्द्रीय बैंक प्रोत्साहन पैकेज जारी

चार्ट 2 : हाल के वर्षों में राजकोषीय घाटा अपने बजटीय अनुमान से बहुत अधिक रहा

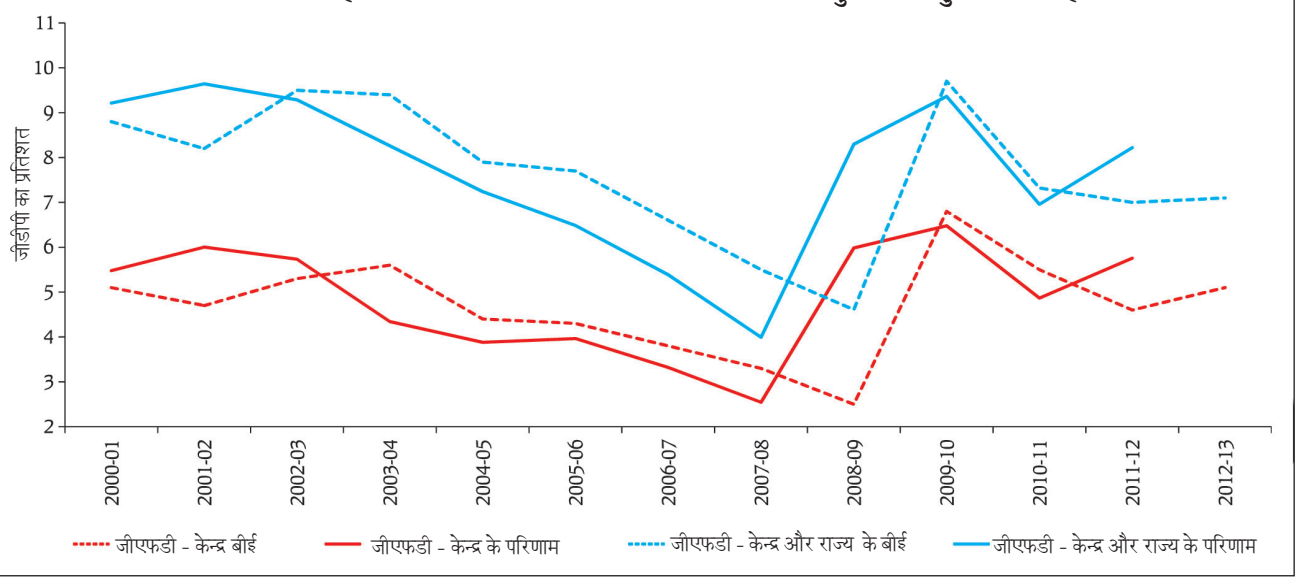

चार्ट 3 : नवंबर 2011 से मुद्रस्फीति में कमी के साथ ही खाद्येतर विनिर्मित उत्पाद की मुद्रास्फीति में कमी आई

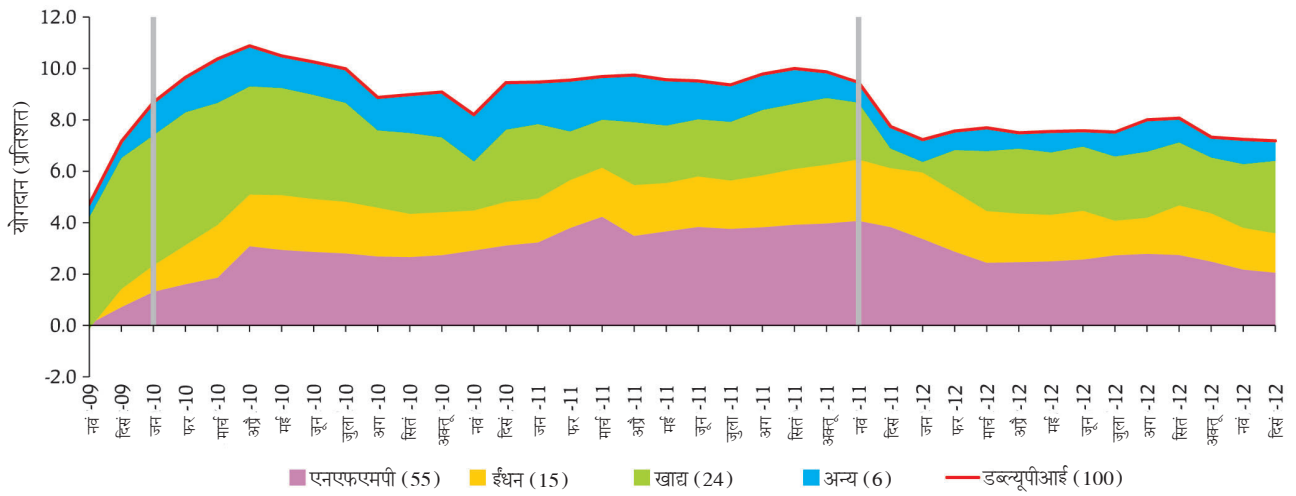

रखने के पक्ष में थे। दूसरी ओर, घरेलू स्तर पर उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति अधिक थी, घरेलू मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं बढ़ रही थीं और अधिशेष चलनिधि काफी अधिक थी। ये घटनाएं मुद्रास्फीति को प्रभावित करने वाली थीं।

फिरभी, रिज़र्व बैंक ने अपरंपरागत चलनिधि सहयोगी उपाय समाप्त कर दिएं और बैंकों के सांविधिक चलनिधि अनुपात को फिर से संकट पूर्व के स्तर पर लाया गया। उसी समय, मौद्रिक नीति में उल्लेख किया गया कि आर्थिक संवृद्धि संकट की स्थिति से सुधर रही थी और इस स्थिति में किसी प्रकार की कठोर कार्रवाई मौद्रिक नियंत्रण सुधार को प्रभावित कर सकती थी। तदनुपरांत, जनवरी 2010 में, सीआरआर में बैंकों की निवल मांग और मीयादी देयताओं को 75 आधार अंकों की वृद्धि की गई और मार्च 2010 में पहली बार नीतिगत दरों में 25 आधार अंकों की बढ़ोतरी की गई। मार्च 2010 से अक्तूबर 2011 के बीच मुद्रास्फीति को कम करने और स्फीतिकारी प्रत्याशाओं को सहयोग देने के लिए नीतिगत रिपो दर में 375 आधार अंक की बढ़ोतरी की गई। तथापि, नीतिगत दरों को ऐतिहासिक न्यूनतम स्तर 4.75 प्रतिशत से बढ़ाने पर जोर दिया जाए, चूंकि मुद्रास्फीति में पहले से बहुत अधिक वृद्धि हुई थी, इसलिए इस अवधि के दौरान वास्तविक नीतिगत दर प्रतिकूल थी। इस प्रकार, मौद्रिक नीति अभी भी उदार थी,

सारणी 3 : हाल के वर्षों में वास्तविक बैंक उधार दर अपेक्षाकृत कम रही, वास्तविक नीतिगत दरें कुछ ऋणात्मक रही

(वर्ष-दर-वर्ष प्रतिशत में)

	2000-08 के दौरान औसत	08-09	09-10	10-11	11-12	12-13	2009-13 के दौरान औसत
		वार्षिक					
मौद्रिक ब्लॉक							
मौद्रिक आपूर्ति *	16.6	20.5	19.3	16.0	16.1	13.3	17.0
खाद्येतर ऋण *	23.8	24.5	14.6	21.2	18.7	16.5	19.1
भारित औसत बैंक ऋण दर	12.9	11.5	10.5	11.4	12.6	-	11.5
वास्तविक भारित औसत ऋण दर @	7.7	3.4	6.7	1.8	3.7	-	3.9
नीतिगत रिपो दर	7.0	7.4	4.8	5.9	8.1	8.0	6.8
वास्तविक नीतिगत दर @	1.7	-0.7	0.9	-3.6	-0.8	0.4	-0.8

*2012-13 के लिए आंकड़े 11 जनवरी 2013 तक के हैं, - उपलब्ध नहीं,
@ औसत डब्ल्यूपीआई मुद्रास्फीति के लिए सांकेतिक दर का समायोजन किया गया है ।

चार्ट 4 : नवंबर 2011 से वास्तविक नीतिगत दर कुछ सकारात्मक हो गई जिससे मौद्रिक नीति के प्रभाव में सुधार हुआ

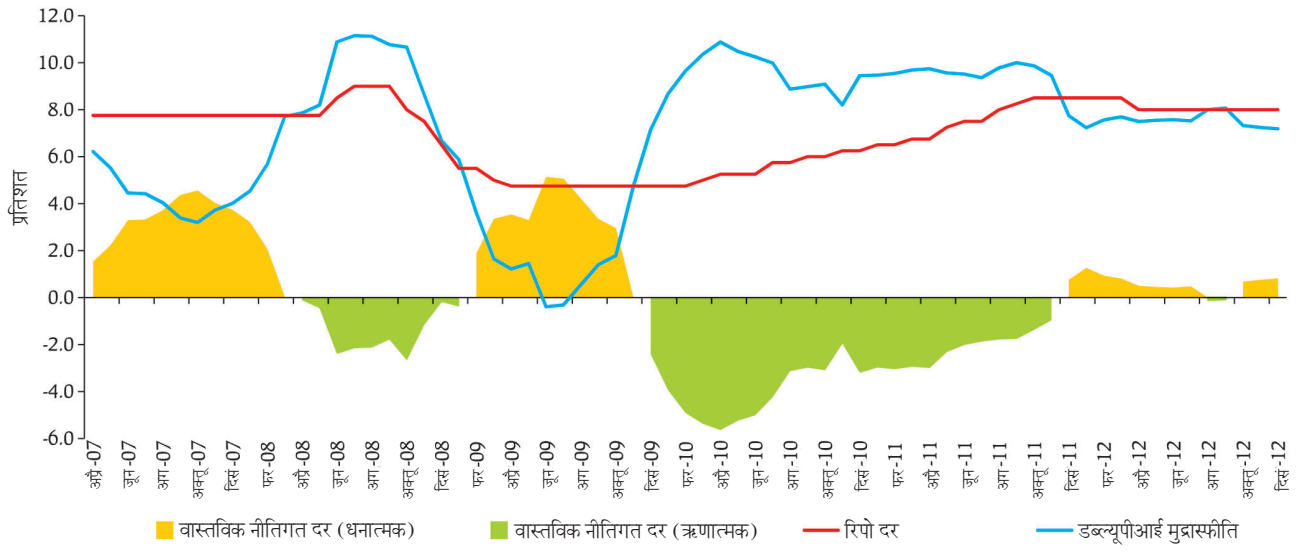

यद्यपि उदारता की सीमा धीरे-धीरे समाप्त हो रही थी (चार्ट 4 और सारणी 3)।

अक्तूबर 2011 और मार्च 2012 के बीच नीतिगत दर 8.5 प्रतिशत पर अपरिवर्तित बनी रही। परिणामस्वरूप, मुद्रास्फीति दर अक्तूबर 2011 से कम होनी शुरू हो गई और जनवरी 2012 से वास्तविक नीतिगत दर सकारात्मक हो गई थी। इससे मौद्रिक नीति की कार्यक्षमता बढ़ गई जो कि मुद्रास्फीति दर में कमी से दिखता है। तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने अप्रैल 2012 में नीतिगत दर में 50 आधार अंकों की कटौती की और 29 जनवरी 2013 को अंतिम मौद्रिक नीति समीक्षा में पुनः 25 आधार अंकों की कटौती की। वर्तमान में सीआरआर अभी तक के न्यूनतम स्तर अर्थात एनडीटीएल के 4 प्रतिशत है और नीतिगत रिपो दर 7.75 प्रतिशत है।

समापन

मैंने मुद्रास्फीति-पहेली को सुलझाने की कोशिश की है और साथ ही यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया कि उत्पादन अंतराल प्रतिकूल होने के बावजूद मुद्रास्फीति अधिक क्यों बनी रहीं, हम जानते हैं कि लगातार उच्च मुद्रास्फीति का बने रहना अर्थव्यवस्था के लिए अच्छा नहीं है क्योंकि यह वास्तविक लागत को बढ़ाती है जिसका प्रभाव अर्थव्यवस्था के विभिन्न वर्गों पर असंगत रूप से पड़ता है। मुद्रास्फीति को स्थायी आधार पर कम करने और मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं का सहयोग करने के लिए अनेक चरणों पर नीतिगत उपाय करने की आवश्यकता है।

पहला, पोषण संबंधी सुरक्षा का लक्ष्य रखना न सिर्फ युवा जनसंख्या से मिलने वाले जनसांख्यकीय लाभ को प्राप्त करने के लिए बल्कि खाद्य कीमतों को नियंत्रित रखने के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। इसके लिए कृषि क्षेत्र में व्याप्त आपूर्ति-मांग असंतुलन को दूर करना होगा और आपूर्ति श्रृंखला को आधुनिक बनाना होगा।

दूसरा, देश में विद्युत सुरक्षा को सुनिश्चित करने हेतु गहन प्रयास करने की जरूरत है। जीवाश्म ईंधन की हमारी अधिकांश जरुरत आयात के जरिए पूरी की जाती है। इस दिशा में बाजार के अनुसार पेट्रोलियम उत्पादों के मूल्यों का निर्धारण एक आवश्यक उपाय है ताकि खपत को किफायती बनाया जा सके और सब्सिडी के बोझ को कम किया जा सके। इसके लिए विद्युत उत्पादन को बढ़ाने हेतु उपाय किए जाने चाहिए ताकि डीजल के उपयोग से बिजली का उत्पादन कम किया जा सके।

तीसरा, आपूर्ति निरुद्ध अर्थव्यवस्था में मुद्रस्फीति की सीमा तय करने के लिए संभाव्य उत्पादन एक विश्वसनीय मानदंड़ नहीं है क्योंकि इस स्थिति में फर्म अपनी क्षमता से कम क्षमता में कार्य करती है और फिर भी मूल्यन शक्ति अपने पास रखती है। इसलिए, विद्युत आपूर्ति की विश्वनीयता और आवश्यक औद्योगिक कच्चे माल की उपलब्धता औद्योगिक क्षमता उपयोग और उत्पादकता सुधार के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। मुद्रास्फीति को कम करने के अतिरिक्त यह उत्पादों के आयात

पर निर्भरता को कम करेगा जिसके लिए देशी क्षमता उपलब्ध है।

चौथा, विनिमय दर स्थिरता को बनाए रखना अनिवार्य है ताकि वस्तुओं, विशेष रूप से कच्चा तेल, के लिए अंतरराष्ट्रीय मूल्य दबावों के संचरण को सहायता मिल सके। इसके लिए शेष विश्व के साथ अपने भुगतान-संतुलन में चालू खाते का प्रबंधन उपयुक्त स्तर पर रखने की जरूरत होगी।

पांचवां, राजकोषीय सुदृढ़ीकरण देशी और बाह्य शेष दोनों को बनाए रखने के लिए महत्त्वपूर्ण है ताकि हम दोहरे घाटे के जोखिम से बच सके। जैसा कि हमारे 2003-08 के उच्च संवृद्धि अनुभव से पता चलता है कि कम राजकोषीय घाटा न सिर्फ निजी निवेश को प्रोत्साहित करता है बल्कि मूल्य स्थिरता को बनाये रखने में भी मदद करता है।

अंत में, वित्तीय बाजार की गहनता बढ़ाने से संबंधित उपायों पर दृढ़ रहते हुए और ऋण लेने की अड़चनों का समाधान करते हुए मौद्रिक नीति को संवृद्धि-मुद्रास्फीति प्रणाली विकसित करने हेतु समुचित उपाय करने की जरूरत है ताकि हम अस्फीतिकारी तरीके से अपनी संभाव्य संवृद्धि की ओर बढ़ सके। हम विकास की जिस अवस्था में हैं, वैसे देश के लिए जहां अधिक मात्रा में श्रमिकों की आपूर्ति की जाती है, की संभाव्य संवृद्धि स्थिर नहीं होती। उत्पादकता में सुधार के साथ-साथ निवेश में किए गए सुधार उपाय मूल्य स्थिरता के वातावरण में ही संभाव्य संवृद्धि के लिए सहायक हो सकते हैं। उस स्थिति में भी, जब स्फीतिकारी दबाव में आपूर्ति पक्ष के कारक अधिक प्रभावी होते हैं, विस्तृत स्फीतिकारी प्रक्रिया में जाने के जोखिम को देखते हुए, नीतिगत प्रतिक्रिया की आवश्यकता है। जहां मौद्रिक नीति संबंधी उपायों को मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के अंसतुलन के जोखिम को समाप्त करना होता है, वहीं संरचनागत आपूर्ति अड़चनों को ध्यान में रखना महत्त्वपूर्ण हो जाता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि ये दीर्घावधि में आवश्यक बाध्यता न बन जाएं और मुद्रास्फीति प्रबंधन का कार्य और अधिक कठिन न हो जाए। कम और स्थिर मुद्रास्फीति सुनिश्चित करके रिज़र्व बैंक इस सामाजिक कार्य में काफी योगदान कर सकता है।

मैं एक बार पुनः बहुमूल्य सामाजिक कल्याणकारी प्रयासों के लिए पूर्णवाद चैरिटेबल ट्रस्ट और इसके लाइफ मैनेजमेंट इन्स्टीट्यूट को धन्यवाद देता हूँ और उनके द्वारा दिए गए सम्मान को विनम्रतापूर्वक स्वीकार करता हूँ।

धन्यवाद!